विरेचन सिद्धान्त का विश्लेषण

विरेचन सिद्धान्त उक्त व्याख्याओं के आधार पर यह माना जाता है कि धार्मिक संगीत की चर्चा करके और मानसिक शुद्धि की बात स्वीकार करके अरस्तू ने उसके धार्मिक और मानसिक रूप को स्वतः स्वीकार किया है. सत्य का अंश निहित होने से कलापरक अर्थ भी निश्चयतः सर्व-स्वीकृत है. वैसे देखा जाए तो अरस्तू के विरेचन के मानसिक अर्थ का समर्थन मनोविज्ञान भी करता है. विरेचन के द्वारा मनोवेगों का परिष्कार होता है. वारनेज ने इसकी व्याख्या करते हुए स्वीकार किया है कि मनोविकारों को बाहर निकालना ही नहीं, उनका सन्तुलन भी विरेचन के अन्तर्गत आता है.

Scanned with CamScanner

विरेचन के अनुसार त्रासदी की कटुता का अंश नष्ट हो जाता है, क्योंकि त्रासदी में 'त्रास' और 'करुणा' साथ-साथ चलते हैं. विरेचन की दो स्थितियों 'करुणा' और 'त्रास' में से 'त्रास' की स्थिति विरेचन सिद्धान्त और व्यवहार में थोड़ी भिन्न है, क्योंकि व्यावहारिक जीवन में हम अपने ऊपर आयी विपत्तियों से ही पीड़ा अनुभव करते हैं, जबकि दर्शक के रूप में हम पात्र की विपत्तियों को देखकर सम्भावित पीड़ा से पीड़ित हो उठते हैं. इसे सहानुभूतिजनित कम्पन स्वीकार किया गया. इस सहानुभूति-जनित कम्पन का आधार जहाँ भारतीय साधारणीकरण को स्पर्श करता है, वहीं प्रो. बूचर ने इस सम्बन्ध में दो धारणाएँ प्रस्तुत की हैं–

1. **'स्व' की क्षुद्रता से मुक्ति**–जब संकुचित 'स्व' अपने मूल रूप 'क्षुद्र' और 'कटु' का परित्याग करके विस्तृत, विशाल और उदात्त हो जाता है, तो यह सहानुभूति की भावना से अधिक मात्रा में प्रेरित हो उठता है. नाटक के नायक की पीड़ा, खलनायक द्वारा उसे दिए गए त्रास, अत्याचार, आदि हमारे मन में करुणा, आक्रोश, उत्तेजना आदि के भाव जगाते हैं, तो वहाँ 'स्व' के विकास का ही रूप दिखाई देता है.

हमारा संकुचित 'स्व' विकसित होकर नायक के साथ तादात्म्य स्थापित करके उसके प्रति सहानुभूति जगा देता है, वहीं 'सद्' के प्रति आस्था भी उभरती है कि 'असद्', 'सद्' को पीड़ा पहुँचा रहा है. यह आस्था व्यक्ति के माध्यम से हमारे 'स्व' को समष्टिगत कर देती है.

2. **कलात्मक प्रक्रिया**–उनका तर्क है कि त्रासदी का कलात्मक रूप सुखद होता है. 'दुःख', 'सुख' में बदल जाता है. डॉ. नगेन्द्र उन दोनों सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए कहते हैं कि यदि ये सिद्धान्त अरस्तू को मान्य होते तो इनका विवेचन उन्होंने अपने मत में कहीं-न-कहीं अवश्य किया होता. अतः विरेचन आनन्द की भूमिका है, आनन्द नहीं, क्योंकि उसमें सुख का केवल भावात्मक रूप रहता है अर्थात् मनः शान्ति और विशदता रहती है.

इस संक्षिप्त विवरण से ध्वनित होता है कि उसमें 'मनः शान्ति' और 'विशदता' दो भाव तो निहित रहते ही हैं और ये दोनों भाव भी 'आनन्द' की स्थिति के निकट हैं. इस प्रकार यह सिद्धान्त भारतीय-रस सिद्धान्त से समता रखता है.

विरेचन और आनन्दानुभूति–अरस्तू द्वारा प्रतिपादित विरेचन जिस त्रासदी को महत्त्व देता है, उसमें करुणा और त्रास दोनों की प्रधानता होती है. यह त्रासद-प्रभाव तथा भारतीय काव्यशास्त्र में करुण रस के आस्वाद वाले सिद्धान्त में पर्याप्त समानता भी है और असमानता भी है. त्रासदी में करुणा और त्रास के कारण पीड़ा की अनुभूति का प्राधान्य है, तो करुण रस में शोक की प्रधानता है. 'नाट्यशास्त्र' में शोक का तात्पर्य है–इष्ट-वियोग, विभव-नाश, वध-बन्धन तथा दुःखानुभूति आदि

Scanned with CamScanner

से उत्पन्न होने वाला अनुभव शोक कहलाता है. अतः करुण रस में शोक व करुणा दोनों भाव रहते हैं.

त्रासदी और करुण रस की समानता इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाती है जब हम 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक देखते हैं, जो त्रासदी है, तो हमें राजा हरिश्चन्द्र के राज्य-दान के बाद दक्षिणा चुकाने के लिए स्वयं को बेचने हेतु इधर-उधर भटकते तथा चाण्डाल के हाथ बिकते देखकर त्रास होता है, तथा रानी को पुत्र की मृत्यु पर विलाप करते देखकर करुणा उपजती है. वास्तविक विपत्ति के साक्षात्कार से यदि करुणा की उद्भूति होती है, तो वैसी ही विपत्ति की पुनरावृत्ति की आशंका से त्रास उत्पन्न होता है. इस प्रकार करुण रस में करुणा व त्रास दोनों समाविष्ट हैं. 'नाट्यशास्त्र', 'दशरूपक' तथा 'साहित्य दर्पण' में शोक और करुण रस का यही सम्बन्ध दर्शाया गया है. इससे स्पष्ट है कि अरस्तू के विरेचन सिद्धान्त और करुण रस में पर्याप्त समानता है.

इन दोनों में उक्त साम्य होते हुए भी अनेक बातों में पर्याप्त वैषम्य भी है. इनमें प्रथम वैषम्य तो यह है कि अरस्तू ने करुणा और त्रास को सदैव युग्म के रूप में स्वीकार किया है, परन्तु भारतीय मत के अनुसार करुण एवं भयानक रस मित्र रसों के रूप में स्वीकार किए जाते हैं, फिर भी ये दोनों भिन्न-भिन्न रस माने गए हैं. त्रासदी का प्रभाव मिश्र भाव होता है, तो शोक अमिश्र भाव है. करुण रस में शोक के जो कारण गिनाये गए हैं, उनमें से अनेक ऐसे भी हैं, जो त्रास उत्पन्न नहीं करते; जैसे–मृत्यु. विरेचन सिद्धान्त तथा करुण रस के आस्वाद का सिद्धान्त अतिशय उत्तेजना तथा मनोवेगों के शमन तथा तज्जन्य मनःशान्ति तक तो समान्तर है, पर विरेचन सिद्धान्त की सीमा तो यहीं तक है, जबकि भारतीय करुण रस उद्वेग का शमन मात्र न होकर उसका भोग भी है. भारतीय दर्शन के अनुसार आनन्द 'दुःख का अभाव' मात्र नहीं है वह शुद्ध बुद्ध आत्मा का 'आत्मा-भोग' है.

निष्कर्ष–इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि अरस्तू का 'विरेचन सिद्धान्त' पाश्चात्य काव्यशास्त्र के लिए एक महत्वपूर्ण देन है. इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करके अरस्तू ने काव्य की महत्ता स्थापित की व त्रासदी के प्रभाव को गौरवपूर्ण बनाया तथा मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया. भारतीय रस सिद्धान्त से भी इसका काफी साम्य दृष्टिगत होता है.

Scanned with CamScanner